समता मूलक समाज की स्थापना में डॉ0 भीमराव अम्बेडकर का योगदान

डॉ0 विजय कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर, बी0एड0 विभाग,
रतन सेन महाविद्यालय, बॉरी,
सिद्धार्थनगर

डॉ0 अम्बेडकर द्वारा निर्मित भारतीय संविधान एक लोकतन्त्रात्मक, प्रभुता सम्पन्न होने के नाते इसमें लिंग, जाति, वंश, धर्म और वर्ण का भेद किये बगैर सभी नागरिकों को अपने व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए समान अवसर प्रदान करता है। अर्थात् सामाजिक न्याय एवं समानता इसकी नींव है। समाज में न्याय होगा, तो सामाजिक समानता स्थापित होगी, समानता होगी, तभी नागरिकों को समाज में न्याय एवं संरक्षण प्राप्त होगा।

सामाजिक समानता का प्रश्न जहाँ तक है, भारतीय संविधान में समानता की व्याख्या प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता के रूप में की गयी है। प्रतिष्ठा का अर्थ सभी नागरिकों को समान सम्मान प्रदान करना है। संविधान में कानून द्वारा पुरुषों और स्त्रियों के लिए समान काम के लिए समान वेतन का प्रावधान किया गया है। व्यक्ति की प्रतिष्ठा एवं गरिमा की रक्षा के लिए अश्पृश्यता को दण्डनीय अपराध घोषित किया गया है। अवसर की समानता का अर्थ व्यक्तियों के विकास के लिए समान अवसर प्रदान करना है।

सामाजिक समानता और सामाजिक न्याय के पुनः स्थापना में डॉ0 भीमराव अम्बेडकर का योगदान महत्त्वपूर्ण है। उनका मानना था, "ईश्वर की दृष्टि में सभी मानव समान हैं और सभी उस परमपिता परमात्मा की संतान हैं, इसलिए एक वर्ग द्वारा दूसरे का शोषण अनुचित है।" उन्होंने दलित, शोषित, अपमानित वर्ग को व्यक्तित्व की गरिमा दिलाने और 'अछूत' कहलाए जाने के विरुद्ध सबल जनमत बनाया। इसके लिए उन्होंने स्थान-स्थान पर जन सभायें कीं। 2। मार्च, 1928 को नागपुर की एक सभा में स्वराज्य प्राप्त के पश्चात् भारतीय संविधान व अछूतों के लिए मौलिक अधिकारों की पुरजोर माँग की। अछूतों तक अपना संदेश पहुँचाने के लिए उन्होंने एक पाक्षिक समाचार पत्र 'बहिष्कृत भारत' निकालना शुरू किया। अछूतों को जागृत करने के लिए उन्होंने शिक्षा पर विशेष बल दिया और इस उद्देश्य के लिए उन्होंने डिप्रेस्ड क्लास एजूकेशन सोसायटी और पीपुल्स एजूकेशन सोसायटी की स्थापना की।

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर प्रगतिशील थे। आप भाग्य, भगवान एवं भरोसे के मार्ग के अनुगामी नहीं थे। साथ ही आप समाज में विद्यमान आडम्बर, हिंसा, अस्पृश्यता तथा छिछलेपन के विरोधी थे। डॉ0 अम्बेडकर समाज के प्रत्येक कार्य में शालीनता, उद्देश्य प्राप्ति के साधनों में पवित्रता लाना चाहते थे। इसलिए वे तत्कालीन अंग्रेजी शासन के प्रगतिशील एवं तथाकथित समतावादी कहे जाने वाले सिद्धान्तों के घोर विरोधी थे। उन्होंने ब्राह्मणवादी, दोषपूर्ण जाति व्यवस्था के सिद्धान्तों के प्रति घोर विरोध प्रकट किया। साथ ही आपने सामाजिक मानवीय मूल्यों व मान्यताओं के शोषण को निडर होकर समाप्त करने का अथक प्रयास किया। उन्होंने जातीय अपमान, लांछन, पीड़ा और व्यथा से कराहते अछूतों को नारकीय जिन्दगी से छुटकारा दिलवाया और समता प्रदान की। संविधान सभा में संविधान पेश करते हुए भी उन्होंने सामाजिक समरसता पर बल देते हुए कहा था- 26 जनवरी, 1950 को हम विसंगतियों के जीवन में प्रवेश कर जायेंगे। राजनीतिक तौर पर हम तो बराबर हो जायेंगे, परन्तु सामाजिक और आर्थिक जीवन में नहीं।

Scanned with OKEN Scanner

डॉ0 अम्बेडकर ने जाति संस्था के उन्मूलन का नारा समतामूलक समाज की स्थापना के लिए उठाया था। उनका विश्वास था कि जाति संस्था का बज्र ढाँचा मानव की स्वतन्त्रता एवं मनुष्यता के उदात्त मूल्यों को धूमिल करता है। डॉ0 अम्बेडकर जातिवाद के उद्गम और उसके स्वरूप की खोज करते हुए उसे समूल नष्ट करना चाहते थे। उनके जीवन भर के चिन्तन का लक्ष्य था जातिवाद की जड़ों में मट्ठा डालकर उसे मिटाने की तैयारी करना।

डॉ0 अम्बेडकर का मानना है कि भारतीय हिन्दू समाज एक पिरामिड की भाँति है, जिसमें अनेक जातियाँ हैं और प्रत्येक जाति पर एक उच्च जाति प्रतिस्थापित है। आज हम कहते हैं कि सवर्ण लोग दलितों से इर्ष्या करते हैं तथा उनसे भेदभाव करते हैं। क्या कभी दलितों ने यह सोचा है कि उनकी भी अनेकों जातियाँ हैं और उनमें वहाँ भी असमानता और छुआछूत है। उनमें अपस में रोटी-बेटी का व्यवहार नहीं है। जब तक उनमें असमानता रहेगी और मतभेद बना रहेगा, तब तक वे कभी भी संगठित नहीं हो सकते हैं। डॉ0 अम्बेडकर ने कहा- अधिकारों की रक्षा कानून द्वारा नहीं, बल्कि समाज की सामाजिक व नैतिक भावना से होती है। यदि समाज की मानसिकता ठीक है तो अधिकार सुरक्षित रहेंगे। यदि समाज उन्हें स्वीकार नहीं करता, तो उन्हें कोई भी संसद या राष्ट्र उनकी रक्षा नहीं कर सकता है।

डॉ0 अम्बेडकर ने कहा- धर्म, संस्कृति, भाषा आदि की प्रतिस्पर्धी निष्ठा के रहते हुये मानवीयता के प्रति निष्ठा नहीं पनप सकती है। मैं चाहता हूँ लोग पहले मानवीय हों और अन्त तक मानवीय रहें, मानवीय के अलावा कुछ नहीं। डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर व्यक्ति पूजा और अंधविश्वास के पक्ष में कभी नहीं रहे। आपने कहा था कि- "व्यक्ति पूजा से इन्सान का सम्मान खत्म हो जाता है। उन्होंने अपना जन्मदिन मनाने पर इसका विरोध किया था। आपका मानना था कि जब लोग महापुरुषों को भगवान मानने लग जायेंगे तो महान पुरुषों का वास्तविक स्वरूप खत्म हो जायेगा। साथ ही उनके आदर्श भी लुप्त हो जायेंगे। उनका विचार था कि महापुरुषों को भगवान मानकर नहीं, बल्कि उनके आदर्शों की पूजा करनी चाहिए। लोगों को उनके आदर्शों पर चलना चाहिए तथा उनके कार्यों को आगे बढ़ाना चाहिए। आपका मानना है कि कर्म से इन्सान बड़ा बनता है और जो लोग समझते हैं कि हमारे भाग्य में तो गरीबी लिखी है वे कभी तरक्की नहीं कर सकते। आज जिन्होंने मेहनत की वे सम्मानपूर्वक जीवन जी रहे हैं और जो गरीबी और जाति-पात को परमात्मा की देन मान बैठे रहे, उनकी हालत में कोई सुधार नहीं हुआ। ऐसे लोग देश पर भी भार हैं। उन्हें चाहिए कि वे भी समाज की धारा में आयें और देश के विकास में योगदान दें।

डॉ0 अम्बेडकर ने तत्कालीन हिन्दू धर्म में फैली हुई बुराइयों एवं त्रुटियों पर प्रकाश डालते हुए अपनी पुस्तक एनीहीलेशन आफ कास्ट में लिखा है- "हिन्दू समाज को ऐसे धार्मिक आधार पर अवश्य नये सिरे से संगठित किया जाना चाहिए जो आजादी, समानता और भ्रातृभाव के सिद्धान्तों को स्वीकार करें।"

सामाजिक न्याय की स्थापना हेतु राज्य कानून की भूमिका को डॉ0 अम्बेडकर ने स्वीकार तो किया, किन्तु वे इनकी सीमाओं से परिचित थे। डॉ0 अम्बेडकर का मानना था कि कानून के द्वारा स्वतन्त्रता और समानता की स्थापना की जा सकती है, किन्तु इन्हें लोगों के व्यवहार का सहज अंग नहीं बनाया जा सकता है और न ही कानून के माध्यम से लोगों में भ्रातृत्व भाव पैदा किया जा सकता है। विश्वास और प्रौद्योगिकी ने आधुनिक युग में स्वतन्त्रता और समानता के लिए संघर्ष को तेज किया है किन्तु भ्रातृत्व भाव के विकास में असफल रहा है। अम्बेडकर का अभिप्राय मजहब से नहीं, अपितु वास्तविक धर्म से था जो सामाजिक न्याय अर्थात् स्वतन्त्रता, समता और भ्रातृत्व की कसौटियों पर खरा उतरता हो।

Scanned with OKEN Scanner

डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण समता के पक्षधर थे। वे हर प्रकार के भेदभाव, छुआछूत और अलगाव के विरोधी थे इसलिए यह भलीभाँति समझने की जरूरत है कि अम्बेडकर का अर्थ सामाजिक समता है, समरसता नहीं अम्बेडकरवाद का अर्थ भातृत्व है घृणा नहीं। जहाँ तक भाईचारे का प्रश्न है, उसमें डॉ० अम्बेडकर का मानना था कि स्वतन्त्रता एवं समानता पर आधारित न्याय को स्थायित्व प्रदान करने अथवा स्वतन्त्रता एवं समानता को लोगों के व्यवहार व आचरण का स्वाभाविक अंग बनाने की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण अवश्य है कि इसे संविधान, कानून या राज्य शक्ति के द्वारा लागू नहीं किया जा सकता है। अम्बेडकर की दृष्टि में यह कार्य तो धर्म के द्वारा वह भी अन्य धर्मों की तुलना में बौद्ध धर्म के द्वारा अधिक प्रभावशाली हो सकता है। आज भले ही विज्ञान के विकास के साथ लोगों की सोच में मौलिक बदलाव एवं जाति व्यवस्था के परम्परागत आधार कमजोर तथा समाप्ति के आसार बढ़ गये हों, लेकिन मानसिकता को बदलने में अभी वक्त लगेगा, फिर यह तो कहा जा सकता है कि सत्ता और लाभांश के न्यायपूर्ण बंटवारे के लिये संघर्ष का शंखनाद हो चुका है जो अब रुकने या थमने वाला नहीं है। धीरे-धीरे यह संघर्ष गहन और उग्र होगा। इक्कीसवीं सदी न्यायपूर्ण समाज की स्थापना के लिए निर्णायक होगी। भारत में न्यायपूर्ण समाज की कल्पना, जातिविहीन समाज की रचना के बिना साकार नहीं होगी।

डॉ० भीमराव अम्बेडकर ने समाज के सभी अन्यायपूर्ण और दमनकारी स्वरूपों के विरुद्ध विद्रोह ही नहीं किया, बल्कि उन्होंने भारतीय समाज में उभर रही नवचेतना तथा बहुजन जागृति के एक मसीहा के रूप में भी अपनी ख्याति अर्जित की। बहुमुखी प्रतिभा के धनी, शोषित, दलित, पिछड़ों के सामाजिक उद्धार हेतु वे जीवनभर संघर्षरत रहे। डॉ० अम्बेडकर का अटूट विश्वास था कि शिक्षा के द्वारा ही उपेक्षितों एवं शोषितों को प्रगति एवं उन्नति में सहभागी बनाया जा सकता है। जन जागृति की दिशा में सामाजिक क्रान्ति के लिए डॉ० अम्बेडकर ने अपने चिन्तन और साहित्य के माध्यम से कालजयी प्रभाव अंकित किया, जिसे जानना हम सब भारतीयों के लिए हितकर है।

अपने ऐतिहासिक निबन्ध 'जाति भेद का विनाश' में बाबा साहेब ठीक ही लिखते हैं,"जाति व्यवस्था श्रम का विभाजन नहीं है न स्वाभाविक गुणों पर टिका है, बल्कि वह माता-पिता के सामाजिक ओहदे पर टिका है।" इसमें कोई शक नहीं कि निम्न जाति के लोगों के साथ आज भी कुछ अपवादों को छोड़कर शहर एवं गाँवों में असमानता का व्यवहार किया जाता है। यह ठीक है कि वर्तमान में दलितों के साथ पूर्व की तरह नफरत नहीं की जाती, न ही उनकी दृष्टि पड़ने से कोई अपवित्र होता है, लेकिन अभी भी छुआछूत के बीज विद्यमान हैं। जब परमात्मा ने सबको एक जैसा बनाया, सब एक तरह से पैदा हुए, एक तरह से मृत्यु होती है, तो फिर मनुष्य की मनुष्य से नफरत कैसी ? ठीक है आर्य समाज जैसी संस्थाओं ने छुआछूत को मिटाने का बड़ा कार्य किया, लेकिन क्या परम्परागत समाज व्यवस्था में लोगों की मानसिकता में कुछ बदलाव आया है ? साथ ही क्या जन्म के कारण आज भी अधिकतर ऊँची जाति के लोगों में जाति का स्वाभिमान नहीं है। वास्तविकता यह है कि भारत विगत दो हजार से अधिक वर्षों से जातिपाँति के चक्रव्यूह में फंसा रहा है। यहाँ थोड़ा विरोधाभाष भी कहने में हो सकता है कि इक्कीसवीं सदी के समाज में परिवर्तन की लहर थोड़ी आशा का संचार की है और विश्व एक गाँव में तब्दील हो गया है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हमें एक जुट होकर जाति-पाँति खत्म करने में सहयोग करना होगा और जो अवसर राष्ट्र की ओर से मिले हैं, उनका सदुपयोग करके देश की उन्नति में भागीदारी निभानी होगी।

Scanned with OKEN Scanner

सन्दर्भ सूचीः

- आर्य, डॉ0 रमेश, सामाजिक न्याय और समानता, अम्बेडकर चिन्तन, प्रवेशांक, 14, अप्रैल, 2004, पृष्ठ- 74
- राम, डॉ0 चांदी, सामाजिक समानता के पक्षधर, अम्बेडकर चिंतन, प्रवेशांक 14, अप्रैल, 2004, पृष्ठ- 108
- डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर, राइटिंग्स एण्ड स्पीच्स, खण्ड-2, पृष्ठ- 195
- लांगायन- डॉ0 रामभक्त : आधुनिक युग में डॉ0 अम्बेडकर की प्रासंगिकता- अम्बेडकर चिंतन, वर्ष-3, अंक-1, 14 अप्रैल, 2006, पृष्ठ- 103, 104
- भारत में सामाजिक न्याय, पृष्ठ- 180
- रत्तू, डॉ0 कृष्ण कुमार, समकालीन भारतीय दलित समाज, बुक एन्क्लेव, जयपुर, पृष्ठ- 155
- बी0आर0 अम्बेडकर, बुद्ध एण्ड फ्यूचर आफ हिज रेलिजन, भीम पत्रिका, प्रकाशन जालंधर, पृष्ठ- 198
- उजाला, डॉ0 सुरेश, डॉ0 भीमराव अम्बेडकर और उनका सामाजिक चिन्तन, जन-सम्मान, वर्ष-5, अंक-2, अगस्त, 2010, पृष्ठ- 24
- गाताड़े, सुभाष- डॉ0 अम्बेडकर से नयी मुलाकात का वक्त, जनसम्मान, अगस्त, 2010, पृष्ठ-10

Scanned with OKEN Scanner